Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 1, January-2019, ISSN 2230-7540

कमलेश्वर के कथा साहित्य में मूल्य चित्रण जीवन मूल्यों का विघटन

Jaswinder Singh[1]* Dr. Praveen Kumar[2]

[1] Research Scholar, PhD (Hindi), OPJS University, Churu, Rajasthan

[2] Research Director, Hindi Department, OPJS University, Churu, Rajasthan

सार - स्वतन्त्रता के पश्चात् सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्तन हुआ, जिसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। स्वतन्त्राता से पूर्व देखे गये स्वप्न स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद टूट गये। देश विभाजन ने व्यक्ति के मन में व्यक्ति के प्रति घृणा की आग भर दी। बेरोजगारी, संत्रास, भय एवं अकेलापन आदि ने जीवन की संवेदनाओं, अनुभूतियों, पारिवारिक विघटन, अन्तर्बाह्य जटिलताओं एवं मूल्य संक्रमण की स्थिति आदि का चित्राण सामान्यतः हुआ। कमलेश्वर का कथा साहित्य भी इन परिस्थितियों के चित्रण से अछूता नहीं है। उन्होंने आधुनिक युगबोध को वैयक्तिक अनुभूति तथा संवेदना के आधार पर अभिव्यंजित किया है। कमलेश्वर ने मानव व्यक्तित्व को आधुनिकता से संबद्ध करते हुए बढ़ती आकुलता, संत्रास, नैराशय एवं भावनाओं से कटकर आत्मकेन्द्रित किया है। आत्मरति की प्रवृत्ति को आत्मसात् कर वैयक्तिगत चेतना को अंकित करने वाली उनकी कहानियाँ---'तलाश', 'ऊपर उठता हुआ मकान', 'मांस का दरिया' आदि इन नवीन परिस्थितियों को उद्घाटित करती है।

----------X----------

युगीन परिवेश में व्यक्ति संत्रास, कुण्ठा, विसंगति अस्थिरता, अस्तित्व की रक्षा तथा अहम की भावना से ग्रस्त एवं कुण्ठित है। कमलेश्वर के कथा साहित्य में भोगे हुए जीवन का यथार्थ चित्राण है। वैचारिक धरातल पर यह मानवीय तथा समाजिक मूल्यों से सम्बन्धित है। कमलेश्वर ने आज के अभाव ग्रस्त, टूटते, बोझिल तथा आर्थिक विषमताओं से जूझते हुए व्यक्ति का चित्रण किया है। 'जोखिम', 'पराया शहर', 'राजा निरबंसिया', 'खोई हुई दिशायें', 'जो लिखा नहीं जाता', 'दुखों के रास्ते', 'तीसरा आदमी', 'समुद्र में खोया आदती' आदि में विवशता एवं सूनेपन की तीव्रता को स्पष्ट देखा जा सकता है।

कमलेश्वर ने अपने कथा साहित्य में सामाजिक ज्ञान, जिसमें राजनीतिक एवं आर्थिक विषमताएं, भोगे हुए क्षण तथा संस्कार की खींचातानी में अकेलेपन तथा अजनबीपन आदि को प्रकाशित किया है। आधुनिक युग के व्यक्ति की टूटन, जनजीवन में अलगाव, ऊब तथा बिखराव की स्थिति को, 'तलाश', 'तीसरा आदमी', 'काली आंधी', 'दुखों के रास्ते', 'बेकार आदमी' आदि में देखा जा सकता है।

स्त्री पुरुष यौन चेतना का चित्रण तथा महानगरीय यान्त्रिक जीवन में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों का विघटन और मुक्त यौन सम्बन्ध 'मांस का दरिया', 'जिन्दा मुर्दे', 'ब्यान', 'तीसरा आदमी', 'एक थी बिमला', 'जो लिखा नहीं जाता', 'दुखों के रास्ते', 'समुद्र में खोया हुआ आदमी', 'आगामी अतीत', 'डाक बंगला' और सांप में चित्रित किया है। स्वतन्त्राता के पश्चात् टूटते हुए पारिवारिक सम्बन्धों तथा बदलते स्त्री-पुरुष के रिश्ते, बनते हुए नये सम्बन्धों को इनके कथा साहित्य में देखा जा सकता है।

यह सत्य है कि जीवन मूल्य परम्पराओं से प्राप्त होते हैं और समाज में इनका विशिष्ट महत्त्व होता है। अर्थात् जहाँ समाज है वहाँ उसके विकास के लिए निजी परम्परायें होती ही हैं। ये परम्परायें ही स्थिर होकर जीवन मूल्यों की सृष्टि करती है और मानव विकास में सहायक होती है। इन परम्पराओं के प्रति भी व्यक्ति का दृष्टिकोण सदा बदलता रहता है। जब नये दृष्टिकोण तथाचिन्तन मानदण्ड बनते हैं तब प्राचीन परम्पराए नये कलेवर पहन कर नए रूप में सामने आती हैं। परम्पराओं के प्रति नए दृष्टिकोण की स्थिति को आज हम स्पष्ट देख पा रहे हैं और यह भी देख रहे हैं कि जीवन मूल्यों में पर्याप्त परिवर्तन आया है। इन परम्पराओं के प्रति नये

www.ignited.in

दृष्टिकोण एवं बदलते जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति कमलेश्वर के कथा साहित्य में सशक्त रूप में हुई है।

कमलेश्वर मूलतः कस्बाई बोध के कथाकार हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात् कस्बाई परिवेश में भी जीवन मूल्य बदल रहे हैं। इसका चित्राण इन्होंने कहीं पात्रों, वस्तुओं एवं स्थानों आदि के माध्यम से किया है तो कहीं उपहास और व्यंग्य के रूप में। 'मुरदों की दुनिया', 'सीता सी सावितरी', 'गर्मियों के दिन' तथा 'चाय घर' में इसे स्पष्ट देखा जा सकता है।

भय एवं संत्रास की यह स्थिति आज के जीवन का सच है। साहित्य में इसका आगमन गत दो महायुद्धों की देन है। आज का व्यक्ति वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक सभी स्तरों पर संत्रास की अनुभूति कर रहा है। महानगरीय संत्रास को आज के चिन्ताओं से भरे युग का व्यक्ति प्रतिपल अभिशाप के रूप में झेलने के लिए विवश है। महानगरीय जीवन में जहां पहचान और आत्मीयता का अभाव है, वहीं 'खोई हुई दिशायें' का चन्दर स्वयं अपने को भी खोजता फिरता है। सारे दिन की खोज के उपरान्त वह इतना निराश हो जाता है कि घर लौटने पर पत्नी का स्वाभाविक सामीप्य भी निशंक रूप से नहीं पाता। सुख के भाव विह्वल क्षणों के बाद सोती हुई निर्मला से त्रस्त चंदर पूछ बैठता है-'निर्मला तुम मुझे पहचानती हो।'[1] यह मनः जिस बेगानेपन और अकेलेपन को भोगता है, उससे संत्रास का सजीव चित्रण है।

'दिल्ली में एक मौत' कहानी जीवन में व्याप्त सभ्यता की कृत्रिमता और संवेदनशून्यता को अधिक तीव्रता के साथ स्पष्ट करती है। शहर की स्वार्थी, संवेदनशून्य और व्यापारी मनोवृत्ति का यह प्रमाण है, 'पिछले साल ही दीवानचंद ने अपनी लड़की की शादी की थी तो हजारों की भीड़ थी।'[2] आज उसके शव के साथ जाने से भी वही लोग कतराते हैं। यदि शमशान भूमि पर सैंकड़ों लोग इकट्ठे हो भी गये हैं, तो उनमें से अधिकतर औपचारिकता के कारण आये हैं, कुछ लोग वहां किसी और से मिलने तथा अपना काम करा लेने के लिए आये हैं। स्त्रियां ऐसे समय भी अपने सौन्दर्य एवं वस्त्रों का प्रदर्शन करने से नहीं चूकती। मृत्यु जैसे समय में भी मनुष्य मूल्य हीनता का ही परिचय देता है। इसी कथ्य का प्रकाशन लेखक ने यहां किया है। शवयात्रा में सम्मिलित होने के मूल में न शोक संतप्त परिवार के प्रति करुणा है न सहानुभूति। वास्तव में सच्ची संवेदनाओं को लेकर शवयात्रा में सम्मिलित होने वालों की यात्रा नगण्य हो गयी है। जीते जी हजारों की भीड़ और मरने के पश्चात् लोगों का उसी व्यक्ति की शव यात्रा में न जाना, यह अन्तर जीवन और मृत्यु का अन्तर है। शहर की स्वार्थी, संवेदन शून्य और व्यापारी मनोवृत्ति का यह प्रमाण है। जीवन मूल्यों का ऐसा विघटन हुआ है कि कृत्रिमता, फैशन और तड़क-भड़क की इस संस्कृति में शोक भी एक फैशन बन गया हैं। श्मशान घाट पर लोग दिवंगत आत्मा के लिए प्रार्थना करने के स्थान पर भविष्य की योजनाएं बनाते हैं। अतुल भिवानी अपने कागज निकाल कर वासवानी को दिखाते हैं। स्त्रियां अपने मेकअप तथारात की पार्टी की बातें करती हैं। दूसरों के दुःख को अपना समझने वाली हमारी मानसिकता इतनी पतनशील हो गई हैं कि आज हमारे पास किसी के शोक में सम्मिलित होने का भी समय नहीं है।

इस कहानी में महानगरीय मनोवृत्ति की अभिव्यक्ति हुई है। सेठ की मृत्यु की खबर से लेकर उसके अन्तिम संस्कार तक की अवधि तक लोगों की विभिन्न प्रतिक्रियाओं, हलचलों और मनोवृत्तियों का सूक्ष्म चित्रण लेखक ने किया है। बौद्धिकता के कारण यान्त्रिकता का प्रवेश जीवन के हर क्षेत्रा में हो रहा है। शहरों का सम्पन्न वर्ग इस यान्त्रिकता के प्रदर्शन का सबसे ज्यादा शिकार है। शहरी जीवन की कठोर यथार्थकता का चित्रण, फैशन, शोक की अभिव्यक्ति, मध्यवर्गीय व्यक्तियों, स्त्रियों आदि सभी पर कठोर व्यंग्य का प्रहार इस कहानी में किया गया है।

सारी विपरीत स्थितियों के बावजूद व्यक्ति की यात्रा किसी एक बिन्दु पर रूद्ध नहीं हो जाती है। वह निरन्तर इस प्रयास में रहता है कि जकड़ती हुई स्थितियों के बीच उसे नया रास्ता निकालना है। प्रस्तुत कहानी ऐसी संभावना पूर्ण दिशा की तलाश का संकेत है। महानगरीकरण की अमानवीय प्रक्रिया के बीच निरन्तर व्यक्ति मशीन होते जाने का बोध करता है। यहाँ के यन्त्रवत जीवन में वह आत्मीय क्षणों को खोता चला जा रहा है। जीवन की भावत्मक उष्मा और मधुर अनुभूतियाँ उसकी पकड़ से निरन्तर छूट जाती है। यन्त्रीकरण उसकी दिनचर्या पर यद्यपि हावी है तथापि व्यक्ति अपने जीवन के भावात्मक संवेगों और उष्मा के कुछ क्षणों को ढूंढ लेता है। मूसलाधार वर्षा के बाद समुद्र के तट पर बैठे स्त्री पुरुष इन्हीं क्षणों की तलाश में है। महानगरीय परिवेश के ठीक बीचो-बीच बैठे होकर भी वे तटस्थ एवं उससे असम्पृक्त हो पाने में सफल हो सके हैं। उनकी यही सफलता यन्त्रीकरण के सम्मुख व्यक्ति की विजय का संकेत है। उन दोनों के एकान्तिक मिलन और आत्मीय क्षणों में महानगर की रूक्षता बाधा बन पाने में सफल नहीं हो पायी है। महानगर की भयावह विराट यान्त्रिकता से निरपेक्ष अपने आप में डूब पाने में वे सफल हो सके हैं। प्रस्तुत कहानी के सन्दर्भ में सुधा अरोड़ा के शब्द-'यह कहानी मूलतः अनुभूतियों और आवेगों की रचना है, जिसमें लेखक समुद्र तट पर सिर पटकती लहरों, मूसलाधार बारिश और बारिश में कहीं दूर नाव से उतरती लाश और उसके इस तरफ एक बैंच पर सारे दुखों के बावजूद अंतरंगता के पवित्र क्षण बांटते एक जोड़े के

www.ignited.in

माध्यम से आदमी को आश्चर्यजनक जरूरी जिजीविषा की तह तक पहुँचती है।'[3] कहा जाता है प्रस्तुत कहानी मनुष्य के अपने ऊपर पूर्ण विश्वास एवं भविष्य में आशा के स्वरों को उद्घाटित करने वाली कहानी है। साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि तथाकथित साहित्यकारों की भांति कमलेश्वर ने केवल अंधेरे के चित्रण में ही सुख नहीं माना। वरन् अंधेरे में प्रकाश ढूंढने का भी प्रयास किया है।

वर्तमान अर्थव्यवस्था, औद्योगिक क्रान्ति, नारी जागरण और शिक्षा के प्रभाव ने वैवाहिक मूल्यों को नवीन आयाम दिये। स्वच्छन्दता की भावना एवं व्यक्तिवादी जीवन दर्शन ने विवाह की परम्परागत धारणा में आमूल परिवर्तन कर दिया। विवाहित जीवन में तलाक के प्रवेश से वैवाहिक मूल्यों को आघात पहुंचा है। प्रेम विवाह, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा-विवाह, विलम्बित विवाह आदि के प्रति मूल्यगत धारणा विकसित हो रही है।

विवाह सम्बन्धी बदलते हुए दृष्टिकोण का निरुपण कमलेश्वर के उपन्यास 'डाक बंगला' में देखा जा सकता है। 'डाक बंगला' की इरा कहती है-'शादी से आत्मा का कोई सम्बन्ध नहीं है। अगर आत्मिक मिलन की बात होती है तो शादियां करने की उम्र पचास के बाद होती। यह महज एक शारीरिक आवश्यकता है जिसे आदर्श का ताज पहनाकर गरिमा दी गई है।'[4]

प्राचीन काल में पति-पत्नी के बीच शारीरिक सम्बन्धों को वैवाहिक नियम के अंतर्गत बांधा गया था। सामाजिक मर्यादा के अनुसार किसी पत्नी का अन्य किसी पुरुष से शारीरिक सम्बन्ध रख्ना अनैतिक था। परन्तु आधुनिक युग में यौन सम्बन्ध अनेक पुराने मानदण्डों को पीछे छोड़ चुके हैं। यौन मुक्ति एक आवश्यकता बन गई है। पति-पत्नी की पवित्राता वाला किस्सा प्राय समाप्त हो रहा है। क्योंकि आज नारी को विवाह एक विवशता लगने लगा है। 'सींखचे' कहानी की पत्नी के लिए विवाह का बन्धन तरह-तरह के प्रश्न उठाता है। वह सोचती है-'उन सातों फेरों में क्या विशेषता है? क्या शक्ति है?--- पति में क्या विशेषता है? वह स्त्राी के लिए कैसा वरदान है।'[5] 'सच और झूठ' कहानी में पत्नी को दूसरे से शादी किये जाने की तिक्त अनुभूति है।

सांस्कृतिक मूल्य:

सांस्कृतिक संस्था के मूल्य हमारी सामाजिक-राजनीतिक संस्था और मानवीय सम्बन्धों आदि के द्वारा तय होते हैं। इन्हीं में से होती हुई सांस्कृतिक संस्था अपना स्वरूप प्राप्त करती है। हम यह भी कह सकते हैं कि अन्तः अप्रत्यक्ष रूप से समूची राजनीतिक सामाजिक और साहित्यिक गतिविधियां सांस्कृतिक मूल्योन्मुखी होती है। मनुष्य की आज तक की यात्रा सांस्कृतिक मूल्यों की प्राप्ति के लिए ही रही है। उसके सम्मुख मानवीय संवेदनात्मक बिन्दु वह सांस्कृतिक लक्ष्य है, जिस तक पहुंचना ही उसकी महायात्रा का प्रमुख उद्देश्य है। उसका सभी मोर्चों पर संघर्ष इसी हेतु की प्राप्ति के लिए है।

कमलेश्वर की कहानियां बाह्य पहचानों को नकारती हुई, मानवतावादी दृष्टिकोण से मानवीय सम्बन्धों को विश्लेषित करती है। करुणा, स्नेह तथा सौहार्द जैसे मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठापना करती है। कमलेश्वर की 'कस्बे का आदमी' और 'नीली झील' कहानियां उस स्थिति को उद्घाटित करती है, जहां व्यक्ति मानव के अतिरिक्त पशु-पक्षियों और प्राणियों तक अपनी करुणा को प्रवाहित करता है। 'कस्बे का आदमी' और 'नीली झील' कहानियां उस स्थिति को उद्घाटित करती है, जहां व्यक्ति मानव के अतिरिक्त पशु-पक्षियों और प्राणियों तक अपनी करुणा को प्रवाहित करता है। 'कस्बे का आदमी' कहानी के छोटे महाराज की संवेदना अपने परिवेश और परिचित व्यक्तियों के अतिरिक्त भावात्मक स्तर पर अपने तोते के साथ जुड़ी हुई है। कस्बाई संस्कृति में संस्कारित छोटे महाराज अपनी आस्थाओं के कारण तोते के मुंह से अन्तिम समय में सन्तवाणी सुनना चाहते हैं। इसके लिए उन्होंने तोते को सम्भाल कर रखा है। किन्तु छोटे महाराज के पूरे व्यवहार को ध्यान से विश्लेषित करने पर यह स्पष्ट होता है कि उनकी इच्छामात्रा सन्तबानी सुनने के अपने स्वार्थ तक संकुचित नहीं है, अपितु उनके भीतर तोते के प्रति ममत्व एवं स्नेह भी है। इसीलिए उन्हें स्वयं से अधिक तोते की चिन्ता है। बिल्ली से बचाने के लिए पहले वे उसे शिवराज के घर भेज देते हैं, किन्तु जब उसके बच्चे के पास तोते के पंख देखते हैं और तोते की दर्द भरी चीख सुनते हैं तो चैंक उठते हैं। अत्यधिक रुग्ण दशा में भी घिसटते हुये वे तोते को वापस ले आते हैं। इतना ही नहीं अपनी मृत्यु से पूर्व तोते को बचाने का पूरा प्रबन्ध कर जाते हैं। यहां छोटे महाराज सारी संस्थाओं से परे एक मानव मात्रा है। उनके भीतर किसी भी स्वार्थ से रहित करुणा का बांध है। इसी के माध्यम से छोटे महाराज मानवीय मूल्यों को स्थापित करने में सपफल होते हैं। यहां तोते के प्रति उनका व्यवहार वैसा ही है जैसा मां का अपने बच्चे के प्रति होता है। प्राणान्त के समय भी वे उसे उसी तरह सम्भाल कर ढक जाते हैं जिस सम्मान से कोई मां अपने बच्चे को रखती है।

छोटे महाराज के समान ही मानवेत्तर करुणा 'नीली झील' के महेसा में मिलती है। महेसा का सौन्दर्य बोध वस्तु जगत की स्थूलता से होता है मानवेत्तर करुणा में परिणत होता है। महेशा के भीतर की भूख शारीरिक रूप में व्यक्त हुई है। किन्तु

www.ignited.in

वास्तव में यह भूख शारीरिक न होकर सौन्दर्य की भूख है। वह केवल बाह्य सौन्दर्य के प्रति इन्द्रियगत आकर्षण तक सीमित नहीं है, अपितु सौन्दर्य का यह आकर्षण उसकी मानवीय संवेदना तक व्याप्त है। इसके परिणामस्वरूप महेशा लोगों को धोखा देने में भी नहीं हिचकिचाता है। पूरी कहानी में महेसा का सौन्दर्य बोध क्रमशः गहराता जाता है और स्थूलता तक सीमित लगता है, किन्तु वास्तव में महेसा मेम साहब व पारबती पर ही नहीं अपितु झील के चारों ओर फैले प्रकृति सौन्दर्य पर भी मुग्ध है। यह आकर्षण मात्रा शारीरिक सौन्दर्य का नहीं है, बल्कि महेसा का यह सौन्दर्य बोध मानवीय संवेदना से निर्मित है। इसीलिए तो झील पर शिकारियों को आया देखते ही परिवेश में डूबा महेसा उदास हो उठता है और वहां से हट जाता है। अन्त में मन्दिर के नाम पर इकट्ठे किये गये पैसों से झील की खरीदी सौन्दर्यानुभूति व्यापक करुणा में परिणित होती है। क्योंकि झील को खरीद कर महेसा वहां शिकारियों का प्रवेश निषिद्ध कर देता है और झील पर उड़ते पक्षियों का शिकार बन्द कर देता है। इस प्रकार सौन्दर्य की व्यष्टिगत अनुभूति समष्टिगत स्तर को छूती हुई मानवेत्तर व्यापक करुणा में परिवर्तित होकर सांस्कृतिक मूल्यों को प्रतिष्ठित करती है।

अध्यात्मिक मूल्यों का ह्रास:

कमलेश्वर की ‘आत्मा अमर है’ कहानी अध्यात्म के मूल्य और आधुनिकता सभ्यता को एक दूसरे के रू-ब-रू खड़ा कर विडम्बनापूर्ण स्थिति में कथ्य को उद्घाटित करती है। आत्मा के अमर होने की बात हमारे अध्यात्म, दर्शन तथा धर्म के क्षेत्रा से जुड़ी हुई है। लेकिन आज इस स्थापना और आस्था का उपयोग विकृत रूप में किया जाता है। क्लब और उसका पूरा वातावरण आधुनिक भौतिक भोग-ऐश्वर्य का प्रतीक है। इस संस्कृति के बीच आत्मा की अमरता की बात असंगत सी लगती है। मि. तथा मिसेज बासवानी और परमार आदि लोग आधुनिक सभ्यता में डूबे हुए लोग हैं। वे उस आधुनिक संस्कृति में रहते हैं, जहां भारतीय संस्कृति में पति पत्नी या स्त्री पुरुष सम्बन्धों का अपना विशिष्ट पारिवारिक सामाजिक धार्मिक तथा अध्यात्मिक मूल्य और महत्त्व रहा है।

परन्तु आज पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित आधुनिक सभ्यता में ये सम्बन्ध सतही स्तर पर मजाक सा बन जाते हैं और इस सन्दर्भ में कई बार व्यक्ति अपने आप को न्याय सम्मत सिद्ध करने के लिए आत्मा का हवाला देने लगता है। मि. बासवानी का आत्मा के सम्बन्ध में दिया गया प्रवचन किसी अध्यात्मिक सूक्ष्म चिन्तन का परिणाम नहीं था और न ही नारी पुरुष सम्बन्ध के किसी गरिमायुक्त पहलू पर वे विचार प्रकट कर रहे थे। अपितु वे केवल परमार को सबसे सम्मुख अपमानित करने के निम्नस्तरीय इरादे से प्रवचन दे रहे थे। इसीलिए आत्मा सम्बन्धी दर्शन का उनके द्वारा उपयोग किया गया। मि. बासवानी के ही समान परमार भी आत्मा की अमरता का विश्लेषण बासवानी से बदला लेने और उन्हें अपमानित करने की दृष्टि से करता है। इस प्रकार आत्मा की अमरता सम्बन्धी मान्यता मजाक का विषय बन कर रह जाती है। उस समय ये सारे प्रवचन अर्थहीन हो जाते हैं, जब मिसेज बासवानी परमार की नाक अपने हाथ से ठीक कर देती है और मि. बासवानी उदार होने की गरिमा ओढ़ लेते हैं। पूरा कलब दोनों के बीच समझौते की खुशी में तालियां पीटने लगता है। लेकिन ये उदारता वृत्तिगत नैसर्गिक उदारता नहीं है, बल्कि यहां भी बासवानी सबके बीच उदार होने का श्रेय लूटना चाहते हैं। इस प्रकार नारी पुरुष सम्बन्ध और भौतिक सभ्यता के सन्दर्भ में आध्यात्मिक मूल्यों के ह्रास और उपहासात्मक स्थिति को यह कहानी उद्घाटित करती है। मि. बासवानी की सभ्यता वह सभ्यता है जो दूसरों को छोटा बनाती है। उन्हें परमार और मिसेज बासवानी के सम्बन्धों पर एतराज नहीं है। उनकी मूल समस्या अपनी श्रेष्ठता को प्रतिष्ठित करने की है। इस श्रेष्ठता को वे अपने व्यक्तिगत गुणों के माध्यम से स्थापित करने की अपेक्षा अपनी तुलना में दूसरों को छोटा बनाकर स्थापित करना या प्राप्त करना चाहते हैं। यह प्रवृत्ति भी अन्ततः मानवीय रिश्तों और मूल्यों के ह्रास का संकेत है। यूं कमलेश्वर की कहानियों की अध्यात्मक चर्चा अपेक्षाकृत कम ही हुई है।

राष्ट्रीयता मूल्यों का ह्रास:

‘बयान’ और ‘नागमणि’ कहानियां तथा ‘रेगिस्तान’ उपन्यास राष्ट्रीय मूल्यों में आस्थावान व्यक्ति की शोकपूर्ण स्थिति को उद्घाटित करते हैं। ‘रेगिस्तान’ उपन्यास तथा ‘नागमणि’ कहानी राष्ट्रीय मूल्यों में आस्थावान एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जो मोह भंग की स्थिति में विक्षिप्त हो जाता है। स्वतन्त्रता के पश्चात् राष्ट्रभाषा के प्रसार का आदर्श उद्देश्य लेकर विश्वनाथ व्यक्तिगत जीवन के सारे सन्दर्भों को समाप्त कर देता है। परन्तु अन्त में इस आदर्श की अर्थहीनता उसके सम्मुख उद्घाटित होती है। वास्तव में जनतान्त्रिक राष्ट्र में सरकार जनहित के प्रयोजन को ध्यान में रखकर आदर्श शासन-व्यवस्था स्थापित करती है। वह जन आकांक्षाओं की प्रतीक होती है। जनता की आकांक्षाओं को पूरा करने का वचन देकर ही वह पद पर आसीन होती है। जनता अपने राष्ट्र को और स्वतन्त्राता को सरकार के हाथों अमानत के रूप में सौंप देती है। जिस राष्ट्र को वह अपनी वैयक्तिक सत्ता से भी अधिक स्नेह करती है उसक जनतान्त्रिक मूल्य की सुरक्षा के लिए वह सरकार से गहरी अपेक्षा रखती है। क्योंकि अन्ततः राष्ट्र की सत्ता ही उसकी संस्कृति की पहचान बनाती है।

परन्तु आज व्यक्तिगत स्वार्थपूर्ति में लिप्त जन नेता जन विश्वास को ठग रहे हैं। राष्ट्र में विकास की दिशाओं के प्रति प्रयत्नशील व्यक्ति तथा राष्ट्र की स्वतन्त्रता के सुख को अपने भीतर अनुभव करने वाला व्यक्ति जब यह देखता है कि नीचे से ऊपर तक फैला विराटशासन तन्त्र जन आकांक्षाओं के साथ खेल रहा है और उसके विरुद्ध कुछ नहीं किया जा सकता तो वह अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठता है। वह देखता है कि इस तन्त्र के विरुद्ध कुछ नहीं किया जा सकता है क्योंकि जनता के सम्मुख शासकों द्वारा ओढ़े गये मुखौटे ही आते हैं। शासनतन्त्रा की वास्तविकता से जनता परिचित नहीं होती।

'बयान' का फोटोग्राफर, 'नागमणि' तथा 'रेगिस्तान' का विश्वनाथ इन्हीं भयावह स्थितियों के शिकार है। यहां राष्ट्रीयता आदर्शों तथा मूल्यों और नेताओं के प्रति सारा विश्वास समाप्त हो चुका है। अपनी ही आंखों के सामने वे राष्ट्रीय मूल्यों का ह्रास देखने को विवश है। रेगिस्तान का विश्वनाथ देखता है कि जो राष्ट्रीय भाषा सांस्कृतिक मूल्यों की वाहिका है, आज उसके प्रति कोई आकर्षण या महत्व शेष नहीं रहा है। सरकार की नीति के कारण विदेशी भाषा के बढ़ते प्रभाव में राष्ट्रभाषा महत्त्वहीन होती जा रही है। अपने आदर्शपूर्ण लक्ष्य की यह भयंकरतम अर्थहीनता विश्वनाथ को विक्षिप्त कर देती है। अपना पूरा जीवन राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रसार में खपा देने वाला विश्वनाथ अन्त में अंग्रेजी बोलने लगता है। यही स्थिति 'नागमणि' के विश्वनाथ की भी होती है। 'बयान' का फोटोग्राफर भी जब व्यवस्था की वास्तविकता से परिचित होता है तब मोह भय की असहनीय यातना से वह आत्महत्या कर लेत है। बच्चन सिंह के शब्दों में-'बयान कहानी की नायिका का बयान सिर्फ एक व्यक्तिगत दुर्घटना का अंतरंग चित्रा ही नहीं, उसे समूचे भ्रष्ट पूंजीवादी सामाजिक-आर्थिक ढांचे का कच्चा चिट्ठा है, जिसके अंतर्गत एक सर्जक अपनी कला और गैरत को बाजार में बेचे बगैर जिन्दा नहीं रह सकता।'[6]

साहित्यिक मूल्यों का ह्रास:

कमलेश्वर की 'स्मारक' कहानी व्यंग्य के स्तर पर साहित्यिक मूल्यों के ह्रास और साहित्यकार की त्रासदी को उद्घाटित करती है। सांस्कृतिक परम्परा के निर्माण में साहित्य का भी योगदान होता है। परम्परागत सांस्कृतिक प्रकृतियां साहित्य में अपने स्वरूप को सुरक्षित करती है। इसके अतिरिक्त सामाजिक सन्दर्भ में भी साहित्य का अपना विशिष्ट महत्व होता है। साहित्यकार समकालीन स्थितियों के बीच कई बार सामान्यजन को दिशा संकेत करता है, सवालों को उनके सही रूप में प्रस्तुत कर उनके हल खोजने का प्रयास करता है। ऐसे किसी श्रेष्ठ साहित्यकार की मृत्यु के बाद उसका 'स्मारक बनाने की प्रथा है। इस प्रकार की प्रथा स्थापित करने का प्रयोजन यही है कि साहित्यकार जिन मूल्यों को स्थापित कर गया है, संघर्ष की जो प्रेरणा दे गया है, वह सब उसके पीछे से जीवित रहे, उसके साथ ही समाप्त न हो जाये। इस प्रकार के स्मारक साहित्यिक मूल्यों की सुरक्षा में सहयोगी हो सके। परन्तु आज किसी साहित्यकार की मृत्यु पर आयोजित शोक सभा या स्मारक स्थापित करने का प्रस्ताव क्रूर किस्म की औपचारिकता मात्रा रह गयी है। वह केवल एक खानापूर्ति रह जाती है। इस प्रकार की सभाओं में साहित्यकार के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के स्थान पर वक्ता इस बात का प्रयत्न ज्यादा करता है कि अपना महत्व स्थापित कर सके। इस प्रकार उस साहित्यकार को उस नेपथ्य में डाल देता है।

यह भी एक विडम्बना ही है कि साहित्यकार के जीवित होने की अवस्था में उसे केवल उपेक्षा ही मिलती है। कहीं से किसी प्रकार का सहयोग उसे प्राप्त नहीं होता। परन्तु मृत्यु के बाद उसकी शोक सभाएं आयोजित करने का दिखावटी प्रदर्शन किया जाता है जो भीतर से एकदम खोखला होता है। वास्तविकता यह है कि जीते जी साहित्यकार बेबस और घुटी जिन्दगी जीने एवं खोखलेपन पर व्यंग्य करता हुआ कहता है-'और तब तुम मेरी लाश को कब्र से निकाल कर तमगे पहनाओगे। मुझे वहां भी आराम से सोने नहीं दोगे। तुमने मुझे जिंदगी भर परेशान किया। मैं अपने बच्चों के पेट की खातिर एक-एक टुकड़े के लिए मारा-मारा पिफरता रहा। जब मैंने सच्ची बात कही तब तुमने मुझे जेल की सींखचों के भीतर ढकेल दिया। मुझ पर मुकदमें चलाए और मेरा जीना मुश्किल कर दिया और मेरी मौत की खबर पाकर तुम तकरीरें करोगे-घड़ियाल के आंसू बहाओगे। और मेरी यादगारें खड़ी करने की बात करोगे-लेकिन मैं तुम्हें जानता हूं--तुम मेरे चैन से सोये हुये दिल पर बेइज्जती का एक खंजर और मारोगे।'[7]

इस दिखावटी प्रदर्शन के अतिरिक्त उसके स्मरण में बड़ी-बड़ी घोषणाएं की जाती हैं। परन्तु वे सारी घोषणाएं उस कार्यक्रम तक ही सीमित होती है। उनमें कहीं कोई सच्चाई नहीं होती। इस सन्दर्भ में आवश्यकता इस बात की है कि साहित्यिक परम्परा में साहित्यकार की उपलब्धियों का विश्लेषण किया जाये, 'एक ऐसा स्मारक हो, जहां उनकी समस्त कृतियां, उन पर लिखी गई आलोचनाएं और उनकी पांडुलिपियां तथा उनका अन्य सामान आदि सुरक्षित रूप में रखा जा सके।'[8] उसके साहित्य को जनसामान्य तक पहुंचाने का प्रयास किया जाये, परन्तु उसकी मृत्यु पर दुःख प्रकट करने वाले और शोक सभाओं का आयोजन करने वाले इस दिशा में कोई प्रयास नहीं

www.ignited.in

करते। इस प्रकार साहित्यकार और उसके साहित्य दोनों में से किसी के भी प्रति न्याय नहीं हो पाता। 'स्मारक' में यही विडम्बना उद्घाटित होती है। सलीम साहब, चन्द्रभान जी, बिहारी बाबू, जितेन्द्र जी और भुवनेश जी आदि सभी लोग नगर में एक महान साहित्यकार की शोक सभा में बोलते हैं। परन्तु उसकी मृत्यु के बाद भी उस पर किये गये उपकार गिनाना नहीं भूलते। उनका वक्तव्य सुन कर हम आसानी से इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि इन सभी वक्ताओं के भीतर मृतक की मृत्यु के दुःख के स्थान पर आत्म प्रशंसा की प्रवृत्ति अधिक तीव्र है। बिहारी बाबू अपने ही मकान में उसका स्मारक बनाने की घोषणा करते हैं, परन्तु 'तीन चार दिन बाद' उस स्मारक निधि वाले मकान पर जिसमें वह युग निर्माता साहित्यकार मरा था एक बोर्ड लगा हुआ था-फ्मकान किराये को खाली है, जिसमें एक नहीं चार लोहे की कीलें खंजरों की तरह घुसी हुई थीं।'[9] मकान को किराये पर उठाने की सोचना, इस बात की ओर संकेत करता है कि शोक सभा कितनी झूठी थी। इतना ही नहीं अपितु मृतक की शोक सभा के पश्चात् बिहारी बाबू चाय पार्टी का आयोजन भी करते हैं। शोक सभा का कोई अवसाद कहीं भी नहीं दिखाई पड़ता। इन में वक्तव्यों में प्रकट ये प्रवृत्तियां न केवल साहित्यिक मूल्यों के ह्रास का संकेत देती हैं अपितु मनुष्य के पतनशील आचरण की सूचक भी है।

जिजीविषा सम्बन्धी मूल्य:

मनुष्य के शारीरिक हित की दृष्टि से उसका सबसे बड़ा शत्रु उसके अस्तित्व का विनाश है। जब भी मनुष्य के अस्तित्व पर संकट आता है, यह प्रवृत्ति मनुष्य की समस्त क्रियाओं का इस प्रकार संचालन करती है कि वह हर सम्भव प्रयत्न करता हुआ अपने आप को बचाना चाहता है और स्वरक्षा में रत हो जाता है। मनुष्य भयंकर से भयंकर पीड़ा को सहन कर भी जीवित रहना चाहता है। यथासम्भव स्वरक्षा ही उसका सर्वाधिक आधार भूमूल्य है।

'एक सड़क सत्तावन गलियां' उपन्यास की लीला 'सुरीला गाती है पर कोई पास नहीं पफटकता और बाजा मास्टर इतना अच्छा बजाते हैं, पिफर भी कोई सुनने नहीं आता।[10] पहले लीला नैतिक मूल्यों की आदर्शवेदी पर संकल्प करती है कि 'रूखा-सूखा खा लूंगी पर व्यापार नहीं करूंगी।[11] परन्तु भूख विकराल बनती जाती है, मृत्यु नजदीक आने लगती है, जीने का संकट बढ़ता जाता है। 'वह हार गई-एक तरपफ भूख और मौत खड़ी थी, दूसरी तरफ जिन्दगी और खुशहाली। उसने बदन का सौदा करके जिन्दगी को चुनना मंजूर किया। क्या बुरा किया उसने शिवराज। कितनी बड़ी सौगात होती है जिन्दगी।'[12] जिन्दगी जीने के लिए नैतिक मूल्यों की इमारत नष्ट हो गई और बाजा मास्टर होने का संकल्प भी समाप्त हो गया। वस्तुतः लीला के तन का सौदा स्वरक्षापरक जैविक मूल्य के आगे महत्वहीन हो गया। नैतिकता के आदर्श का निर्वाह जिन्दगी की कीमत पर नहीं किया जा सकता था। परन्तु यहां जिन्दगी के सामने नैतिकता भी नगण्य होकर रह गई और जीने की प्रबल इच्छा महत्वपूर्ण हो गई।

इस प्रकार इस प्रकार के माध्यम से व्यक्ति के भीतर जीवन जी सकने की जिजीविषा का उद्घाटन हुआ है।

निष्कर्ष:

कमलेश्वर के कथा साहित्य के मूल्य चित्रण का अध्ययन कर हम निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि युग परिवर्तन के साथ-साथ व्यक्ति की आस्थाएं और विचार बदल रहे हैं, जिससे मूल्य परिवर्तन हो रहे हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात् सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में परिवर्तन हुआ है जिसका प्रभाव साहित्य पर पड़ा। स्वतन्त्रता से पूर्व देखे गये स्वप्न स्वातन्त्राता प्राप्ति के पश्चात् टूट गये। देश विभाजन ने व्यक्ति के मन में व्यक्ति के प्रति घृणा की आग भर दी। बेरोजगारी, संत्रास, भय, अकेलापन, अजनबीपन, अलगाव, ऊब, कुण्ठा, विसंगति, अस्थिरता, अस्तित्व की रक्षा तथा अहं की भावना से व्यक्ति कुण्ठित एवं ग्रस्त हो गया। महानगरीय यान्त्रिाक जीवन में वह इन सब पीड़ाओं को भोग रहा है। वर्तमान अर्थव्यवस्था, औद्योगिक क्रान्ति, नारी जागरण और शिक्षा के प्रभाव ने वैवाहिक मूल्यों को नवीन आयाम दिये। स्वतन्त्राता के पश्चात् परिवार की महत्वपूर्ण इकाई पति-पत्नी के सम्बन्धों में विघटन हुआ। स्त्री के विवाह और प्रेम सम्बन्धी दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आया।

पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर आधुनिक सभ्यता में अध्यात्मिक मूल्य मजाक का विषय बन गये हैं। ऐसी सभ्यता में आत्मा की अमरता की बात करना असंगत सा लगता है। स्वतन्त्राता के पश्चात् राष्ट्रीय तथा साहित्यिक मूल्यों का पूरी तरह ह्रास हुआ है। नैतिकता के सन्दर्भ में समस्त मानवीय मूल्य समाप्त हो गये हैं। मात्रा जिजीविषा ही आधारभूत मूल्य रह गया है। जिसके लिए व्यक्ति अपनी सामाजिकता, धार्मिकता, नैतिकता, दार्शनिकता आदि को समर्पित कर देता है।

संदर्भ सूची:

1. कमलेश्वर, मेरी प्रिय कहानियां, पृ. 56

www.ignited.in

2. वही, मांस का दरिया कहानी, पृ. 129

3. कमलेश्वर, खोई हुई दिशाएं कहानी संग्रह

4. सं. मधुकर सिंह, कमलेश्वर, पृ. 179

5. कमलेश्वर, डाक बंगला, पृ. 65

6. कमलेश्वर, राजा निरबंसिया कहानी संग्रह, पृ. 175

7. सं. देवीशंकर अवस्थी, नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति, पृ. 225

8. कमलेश्वर, जिन्दा मुर्दे कहानी संग्रह, पृ. 17

9. वही, जिन्दा मुर्दे कहानी संग्रह, पृ. 25

10. वही, पृ. 27

11. कमलेश्वर, एक सड़क सत्तावन गलियां, पृ. 54

12. वही, पृ. 59

Corresponding Author

Jaswinder Singh*

Research Scholar, PhD (Hindi), OPJS University, Churu, Rajasthan

www.ignited.in